अध्याय छत्तीसवाँ

॥श्री गणेशाय नम:॥ श्री सरस्वत्यै नम:॥ श्री सिद्धारूढ़ाय नम:॥

"हे सतगुरुनाथजी, इन नयनों को आप का मुखकमल देखने का आनंद प्रदान कीजिए, श्रेष्ठ तथा उत्तम चरित्र होने वाले हे गुरुदेव, आप के चरणों को प्रणाम करने वाले लोगों के आप वरदानी हैं, अभय का वरदान देने वाले आप के हाथ मेरे सिर पर रखिए, आप के चरणों के प्रति मेरे मन में होने वाला प्रेमभाव स्थिर रहने दीजिए।"

हे सतगुरु सिद्धनाथजी, आप की जयजयकार हो; आप के चरणों में मैं अपना सिर रखता हूँ, कृपा करके आप अपनी जीवनी बयान करने की प्रेरणा मुझे दीजिए| मुझे क्या करना चाहिए, यह मेरी समझ में न आने के कारण, मेरे मन में रहकर आप ही स्वयं की जीवनी बयान कीजिए। आप अपनी कृपादृष्टि मुझ पर डालेंगे तो क्या असंभव है? इसलिए, मेरे अंतर्भूत स्थिर रहकर मुझ पर कृपा कीजिए। आप के नाम का मुख से हमेशा जाप करते रहने से इस मृत्युलोक में रहते हुए सारी मनोकामनाएँ पूरी होती हैं और देहान्त के पश्चात असीम सुख की प्राप्ति होती है। आप सचमुच ही दयालु होने के कारण तत्काल मेरे अंतर्भूत प्रकट हो जाईए, क्योंकि अगर आप के प्रति मन में श्रद्धा भाव न हो तो जीवात्मा बहुत तड़पता है। अस्तु। श्रोतागण, अब उनकी जीवनी सादर सुनिए।

हुबली में परशुरामपंत नाम का एक सज्जन रहता था। एकबार वह हाथ जोड़कर सिद्धनाथजी के सामने खड़ा हुआ और बोला, "मैं एक दीन पामर मनुष्य हूँ तथा सांसारिक कष्टों से अत्यंत पीड़ित हूँ। हे दीनानाथ, कई जगह घूमकर भी मेरे कष्टों का निवारण करने वाला मुझे कोई भी न मिलने के कारण आखिर मैं आप की शरण में आया हूँ। आप दीन जनों का ज्ञान देकर उद्धार करते हैं ऐसी आप की महिमा सुनने के कारण, आप मेरी रक्षा करेंगे इसलिए मैं आप के चरणों में सिर रखता हूँ, मेरे देहान्ततक मैं गुरुनाथजी की सेवा करूँगा।" ऐसी उसकी दीन वाणी सुनकर सतगुरुजी ने अमृततुल्य शब्दों में कहा, "भक्तराज, आ जा भाई!" और उसे बिठाकर सिद्धजी ने उसके कान में तारक मंत्र का उच्चारण करके उसे दीक्षा दी। उसपर उन्होंने कहा, "तुम ईश्वर के भक्त होकर इन सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर रहोगे। आज से तुम्हे सांसारिक उपाधियाँ

कभी भी नहीं सताएगी, क्योंकि संसार में रहकर भी तुम पूर्ण रूप से शुद्ध हो गये हो। हमारी जीवनी लिखकर उसका प्रचार तथा प्रसार करके जनोद्धार करने का कार्य हमने तुम पर सौंपा हैं।" ऐसा कहकर सतगुरुजी ने उसके सिर पर हाथ रखा; तत्काल परशुरामपंत उठ खड़े हुए; उस समय उनके चेहरे पर एक अलग तेज चमक रहा था।

सतगुरुजी के हाथ का पावन स्पर्श होते ही परशुरामपंत के चेहरे पर ब्राह्म तेज चमकने लगा, सभी गुणों से संपन्न होकर वह पूर्णत: भला मनुष्य हो गया। सतगुरुजी की भक्ति में लीन हुए तथा उनकी कृपा प्राप्ति किए हुए, ईश्वर के महान भक्त परशुरामपंत ने कहा, "हे सतगुरुमाता, मेरे जैसे दीन मनुष्य पर आप ने बड़ी कृपा की हैं; मेरे प्रेम से प्रसन्न होकर आप ने मुझे सेवा का अवसर दिया हैं। अब आप मेरी एक मनोकामना सुनिए। आप की जीवनी लिखने की आप मुझे प्रेरणा तथा आज्ञा दीजिए; उसके पश्चात मैं अपने आप को सचमुच ही धन्य समझूँगा। आप की कृपा से क्या नहीं हो सकता? आप की कृपा से भिखारी को राजपद मिलेगा तो अंधे को दृष्टि देकर आप अपनी जीवनी उससे लिखवाएँगे। इसलिए, 'सिद्धारूढ़-विजय' नाम का ग्रंथ लिखने की मेरी मनोकामना, आप आज्ञा करें तो जल्द ही पूरी हो जाएगी।" यह सुनकर सतगुरुमहाराजजी आनंदित हुए और उन्होंने परशुरामपंत को ग्रंथ लिखने की आज्ञा दी; उसने भावविभोर होकर सतगुरुजी को प्रणाम किया और वह अपने घर लौटा। एक ही महीने में उसने ग्रंथ लिखकर पूरा करके उसे सतगुरुजी के चरणों में अर्पण किया। ग्रंथ अत्यंत सुरसपूर्ण लिखा हुआ देखकर सतगुरुजी आनंदित हुए। उसके पश्चात परशुरामपंत स्वयं गोवा आदि अनेक राज्यों में जाकर वह ग्रंथ लोगों को पढ़कर सुनाते थे, जिससे भक्ति स्फूर्ति होकर असंख्य लोगों का उद्धार हुआ। परशुरामपंत का वैराग्यपूर्ण व्यवहार तथा उसकी निष्काम सेवावृत्ति देखकर लोग उससे बहुत प्रेम करते थे और उसे गुरु की तरह पूजते थे।

एकबार सतगुरुजी की आज्ञानुसार परशुरामपंत रोण नाम के गाँव के लिए निकल पड़ा, जहाँ उन दिनों में सतगुरुजी का समारोह तथा उनकी जीवनी का पठण आदि कार्यक्रम एक सप्ताह भर चलते थे। उन दिनों में, प्रतिदिन भजन,

हरिकीर्तन तथा ईश्वर की आराधना आदि कार्यक्रमों के लिए भक्तगण परशुरामपंत को अपने साथ ले जाते थे। इस वर्ष भी परशुरामपंत को ले जाने की बात तय हुई थी। परंतु भक्तगण आगे निकल गये और परशुरामपंत पीछे रह गया। उसके पश्चात परशुरामपंत, उसकी पत्नी जानकीबाई और मंगेश नाम का एक भक्त, ये तीनों मिलकर गुरुआज्ञा लेकर निकल पड़े। हुबली स्टेशन पहुँच गये, परंतु यात्रीगणों की अत्यंत भीड़ होने के कारण, उन्हें टिकटे नहीं मिल पायी| अगर रेलगाड़ी चूक गयी तो सही समय पर समारोह के लिए वे पहुँच नहीं पाएँगे यह सोचकर तथा क्या करना उचित रहेगा यह न समझने के कारण परशुरामपंत मन ही मन तड़पने लगा। उसने मन ही मन कहा की, सतगुरुनाथजी, आप के कार्य की सिद्धि अब आप ही कराईए, क्योंकि ऐन मौके पर इस प्रकार का संकट आने के कारण, अब आप ही कुछ उपाय करके हमारी सुविधा कीजिए। इतने में वहाँ एक मनुष्य आया और परशुरामपंत से बोला, "आप को कहाँ जाना हैं? क्यों आप यहाँ खड़े हैं?" परशुरामपंत ने कहा, "हम तीनों को रोण गाँव जाना हैं, परंतु मल्लापुर तक की टिकटें हमें नहीं मिली, आज हमारा वहाँ जाना बहुत आवश्यक होने के कारण, क्या करें यह समझ में नहीं आ रहा है|" उसने कहा, "यह तो अच्छा हुआ! मेरे पास ये तीन वहाँ तक की ही टिकटें हैं। इस समय वहाँ मेरा कोई काम भी नहीं है, इसलिए ये टिकटें आप ही रख लीजिए।" ऐसा कहकर उसने परशुरामपंत के हाथ में टिकटें दे दी और पैसे भी लिए बिना एक क्षण में वह अंतर्धान हो गया। परशुरामपंत ने कहा, "सतगुरु महाराजजी ही इस संकट के समय यहाँ आए; क्योंकि मन ही मन हमनें उन्हें हमारे कष्ट बयान किये थे।" उसपर तीनों रेलगाड़ी से यात्रा करके मल्लापुर स्टेशन उतर गए, परंतु उन्हें रहने के लिए कहीं भी जगह नहीं मिली। वहाँ से रोण गाँव कुछ कोसों की दूरी पर था, बाहर घने अँधेरे के कारण मार्ग भी साफ दिखाई नहीं पड़ रहा था। हलके हलके बारीश भी हो रही थी। इतने में एक मनुष्य वहाँ आया और परशुरामपंत से पूछने लगा, "आप कहाँ जाना चाहते हैं?" परशुरामपंत ने कहा, "सच पूछो तो हमें रोण गाँव जाना हैं, परंतु फिलहाल हमें रहने के लिए जगह की आवश्यकता थी| रात वहाँ गुजारकर सुबह हम रोण

जाने वाले हैं।" तत्काल वह मनुष्य गया और एक लालटेन लेकर आया, उसपर उन तीनों को लेकर वह समीप होने वाले एक घर गया।

उसने उन्हें बरामदे में बैठने के लिए कहा, शतरंजी (दरी) बिछा दी और वही सोने की अनुज्ञा दी; उसने अपना नाम "सिद्दप्पा" बताया। उसकी बात सुनकर जानकीबाई ने कहा, "मैं समझ गयी हूँ की यह मनुष्य सिद्धनाथ के सिवाय अन्य कोई भी नहीं है। वही संकट के समय भक्तों की मदद करते हैं।" सिद्दप्पा घर में गया और उसने केले, शक्कर तथा लोटाभर दूध लाकर परशुरामपंत के सामने रख दिया।" परशुरामपंत ने उसे पूछा, "सिद्दप्पा, भाई, क्या तुम हुबली के रहने वाले हो?" उसने कहा, "नहीं, मैं हुबली का नहीं हूँ। आप मेरा गाँव नहीं जानते। रात यहीं रहकर कल प्रातःकाल यहाँ से आप रोण गाँव जाईए।" ऐसा हँसकर कहता हुआ सिद्दप्पा अंधेरे में बाहर चला गया। तीनों को अत्यंत आश्चर्य हुआ, उन्होंने कहा की निश्चित ही वह सतगुरुजी ही होंगे। उसपर मंगेश ने उस घर में रहने वालों से पूछताछ की, तो घर के सभी सदस्य बाहर आए और उन तीनों को पूछने लगे, "आप तीनों लोग यहाँ क्यों पधारे हैं?" उसपर पूरी घटना सुनाने के पश्चात उन्होंने कहा, "यह तो चमत्कार ही हो गया। क्योंकि, जिस सिद्दप्पा नाम के मनुष्य के बारे में आप बात कर रहे हैं, वह हमारा कोई भी नहीं है, इतना ही नहीं, आप लोग कौन हैं यह भी हम नहीं जानते। हमने सोचा की आप इस घर के मकानदार के परिचित होंगे और वे तो गाँव गये हैं; अन्यथा हम आप को यहाँ रहने ही न देते। अभी आप से हमें पता चला की आप सभी सिद्धारूढ़ स्वामीजी के भक्त हैं, इसलिए अब आप यहाँ निर्भय होकर रहिए।" उसपर परशुरामपंत ने कहा, "अगर ऐसा है, तो हम कौन हैं यह जाने बिना ही आप ने हमें दूध तथा फलाहार कैसे भेज दिया?" उन्होंने आश्चर्य से दंग होकर कहा, "कौन कहता है की हमने दूध तथा फलाहार भेजा? आप जिस मनुष्य के बारे में बात कर रहे हैं, वह घर के अंदर आया ही नहीं! वे सारी चीज़ें, उन्होंने माया से निर्माण की होगी। आप के कथन के अनुसार वे सिद्धारूढ़ स्वामीजी ही होंगे।" उस समय सभी को पूर्ण विश्वास हुआ की, जिनको भक्तों की हमेशा चिंता रहती हैं, जो भक्तों की इज्जत रखते हैं, वे सतगुरुनाथजी स्वयं भेस बदलकर आए थे। उस घर के सदस्य अत्यंत आनंदित

हुए और बोले, "कृपा करके हमारी भी उस महान सिद्धारूढ़ स्वामीजी से भेंट कराईए। अल्प काल के लिए ही क्यों न हो, हमें उनके भक्तों का सान्निध्य प्राप्त होने के कारण हम धन्य हो गए। आप हमारे घर आने से हमें अति आनंद हुआ है। आप के साथ हम अवश्य सिद्धसतगुरुजी से मिलने आएँगे।" उस घरके सदस्यों ने उनकी अच्छी तरह से आवभगत करने के पश्चात परशुरामपंत तथा अन्य सदस्यों ने रात वहीं गुजारी और प्रात:काल उठकर वे रोण के लिए निकल पड़े। रोण गाँव का समारोह संपन्न होने के पश्चात फिरसे हुबली लौटते समय, जिस घर में उन्होंने रात बितायी थी, उस घर के सभी सदस्यों को साथ लेकर वे सिद्धाश्रम आए। आने के पश्चात उन्होंने सारा वृत्तांत सतगुरुजी को बताया, उसपर हँसकर वे परशुरामपंत से बोले, "सारा भार सतगुरुजी पर डालने के पश्चात, उनके सिवाय भक्तों को सँभालने वाला, भक्तों का समर्थक अन्य कौन हैं?" सतगुरुजी के शब्द सुनकर सभी आनंदित हुए; भक्तों ने की हुई सतगुरुजी की जयजयकार से अंबर गूँज उठा।

श्रोतागण, अब इस कहानी का लक्ष्यार्थ सुनिए। परशुरामपंत को विवेक, उनकी पत्नी जानकीबाई को शांति और मंगेश को वैराग्य समझें। रोण यहीं जगत समझें। वहाँ रहने वाले लोग यानी विषयोपभोग की वृत्तियाँ समझें तथा सात अवस्थाएँ (शुभेच्छा, सुविचारणा, तनुमानसा, सत्वापत्ति, असंसक्ति, पदार्थाभाविनि तथा तूर्यगा) यानी सात दिनों का समारोह समझें। तीनों लोग उस समारोह के लिए गए। स्वयं सतगुरुजी ने वहाँ आकर उन्हें निष्कामता का टिकट दिया और मन की रेलगाडी में बैठकर वे तीनों समारोह के लिए गए। जब वे उतर गए तो चारो ओर अज्ञान का अँधेरा छाया था| आत्माकार न होने वाली वृत्तियों की बारीश होने के कारण जीवात्माओं को बोधने के लिए जाते समय उन्हें मार्ग में कष्ट हुए| इतने में वहाँ भाग त्याग रूपी लालटेन लेकर सतगुरुजी पधारे। स्वरूप के घर ले जाकर तीनों को बिठाया गया। आनंद का फलाहार देकर उनकी आवभगत की गयी। विश्राम करके वे सभी लोगों को बोध करने चले गए। इस प्रकार की यह सतगुरुजी की महिमा सुनने से सांसारिक दुखों का निवारण होकर मन में सतगुरुजी की मूर्ति दिखाई पड़ती है, जिससे मन ब्रह्माकार होता है। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते

हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह छत्तीसवाँ अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥